11118CH02

अध्याय 2

स्वतंत्रता

परिचय

चित्र www.africawithin.com एवं www.ibiblio.org से साभार।

मानव इतिहास में ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जब अधिक शक्तिशाली समूहों ने कुछ लोगों या समुदायों का शोषण किया, उन्हें गुलाम बनाया या उन्हें अपने आधिपत्य में ले लिया। लेकिन इतिहास हमें ऐसे वर्चस्व के खिलाफ शानदार संघर्षों के प्रेरणादायी उदाहरण भी देता है। यह स्वतंत्रता क्या है, जिसके लिए लोग अपना जीवन देने तक के लिए तैयार रहे हैं? साररूप में स्वतंत्रता के लिए संघर्ष लोगों की इस आकांक्षा को दिखाता है कि वे अपने जीवन और नियति का नियंत्रण स्वयं करें तथा उनका अपनी इच्छाओं और गतिविधियों को आज़ादी से व्यक्त करने का अवसर बना रहे। न केवल व्यक्ति वरन् समाज भी अपनी स्वतंत्रता को महत्त्व देते हैं और चाहते हैं कि उनकी संस्कृति और भविष्य की रक्षा हो।

लोगों के विविध हितों और आकांक्षाओं को देखते हुए किसी भी सामाजिक जीवन को कुछ नियमों और कानूनों की ज़रूरत होती है। हो सकता है कि इन नियमों के लिए ज़रूरी हो कि व्यक्ति की स्वतंत्रता की कुछ सीमाएँ तय की जाए, लेकिन यह माना जाता है कि ये सीमाएँ हमें असुरक्षा से मुक्त करती हैं और ऐसी स्थितियाँ प्रदान करती हैं जिनमें हम अपना विकास कर सकें। राजनीतिक सिद्धांत में स्वतंत्रता के बारे में अधिकतर चर्चा ऐसे नियमों को विकसित करने पर केंद्रित रही है, जो सामाजिक रूप से आवश्यक सीमाओं और बाकी प्रतिबंधों के बीच अंतर स्पष्ट करती है। इस पर भी वाद-विवाद रहा है कि स्वतंत्रता की क्या सीमाएँ होनी चाहिए, जिसके फलस्वरूप किसी समाज की आर्थिक और सामाजिक संरचनाएँ प्रभावित होती हैं। इस अध्याय में हम कुछ ऐसी ही चर्चाओं पर एक नज़र डालेंगे।

इस अध्याय के अध्ययन के बाद आप-

- ☐ व्यक्ति और समाज दोनो के लिए स्वतंत्रता के महत्त्व को समझेंगे।
- ☐ स्वतंत्रता के सकारात्मक और नकारात्मक आयामों में अंतर की व्याख्या करने में समर्थ होंगे।
- ☐ यह समझ पाएँगे की 'हानि सिद्धांत' का क्या मतलब है।

© NCERT not to be republished

स्वतंत्रता

2.1 स्वतंत्रता का आदर्श

इन सवालों के जवाब देने से पहले हम एक क्षण के लिए रुकें और कुछ विचार करें। 20 वीं शताब्दी के एक महानतम व्यक्ति नेल्सन मंडेला की आत्मकथा का शीर्षक 'लाँग वाक टू फ्रीडम' (स्वतंत्रता के लिए लंबी यात्रा) है। इस पुस्तक में उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के रंगभेदी शासन के खिलाफ अपने व्यक्तिगत संघर्ष, गोरे लोगों के शासन की अलगाववादी नीतियों के खिलाफ लोगों के प्रतिरोध और दक्षिण अफ्रीका के काले लोगों द्वारा झेले गए अपमान, कठिनाइयों और पुलिस अत्याचार के बारे में बातें की हैं। इन अलगाववादी नीतियों में एक शहर में घेराबंदी किए जाने और देश में मुक्त आवागमन पर रोक लगाने से लेकर विवाह करने में मुक्त चयन तक पर प्रतिबंध लगाना शामिल है। सामूहिक रूप से इन सभी प्रतिबंधों को नस्ल के आधार पर भेदभाव करने वाली रंगभेदी सरकार ने जबरदस्ती लागू किया था। मंडेला और उनके साथियों के लिए इन्हीं अन्यायपूर्ण प्रतिबंधों और स्वतंत्रता के रास्ते की बाधाओं को दूर करने का संघर्ष 'लाँग वाक टू फ्रीडम' (स्वतंत्रता के लिए लंबी यात्रा) था। विशेष बात यह कि मंडेला का संघर्ष केवल काले या अन्य लोगों के लिए ही नहीं वरन श्वेत लोगों के लिए भी था।

इसी स्वतंत्रता के लिए मंडेला ने अपने जीवन के अट्ठाईस वर्ष जेल की कोठरियों के अंधेरे में बिताए। कल्पना कीजिए कि अपने यौवन को किसी आदर्श के लिए होम कर देना; अपने दोस्तों के साथ बातचीत करने, अपने प्रिय खेल (मंडेला बॉक्सिंग पसंद करते थे) खेलने, अपने पसंद के कपड़े पहनने, अपना प्रिय संगीत सुनने जैसे आनन्दों को छोड़ देना और जीवन के अंग रहे उत्सवों का त्याग कर देने का क्या मतलब होता है? कल्पना कीजिए कि आपने यह सब छोड़ दिया है क्योंकि आप अपने लोगों की आज़ादी के लिए अभियान चला रहे हैं। आपने एकाकी कोठरी में बंद रहना चुना है और आपको यह भी नहीं पता कि आपको जेल से कब छोड़ा जाएगा। स्वतंत्रता के लिए मंडेला ने व्यक्तिगत रूप से बहुत ही भारी कीमत चुकाई।

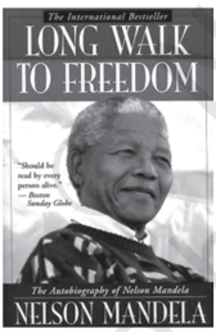

स्वतंत्रता के लिए संघर्ष से जुड़ा एक और मामला देखते हैं। आँग सान सू की के लिए गाँधी जी के अहिंसा के विचार प्रेरणास्रोत रहे हैं। सू की को म्यांमार में उनके घर पर नज़रबंद करके रखा गया था। सू की अपने बच्चों

क्या केवल महान स्त्रियाँ और पुरुष ही स्वतंत्रता जैसे ऊँचे आदर्शों के लिए लड़ते हैं? इस सिद्धांत का मेरे लिए क्या मतलब है?

not to be republished

से अलग हैं। यहाँ तक कि जब उनके पति कैंसर के कारण मौत से जूझ रहे थे, तब भी सू की को उनसे मिलने नहीं दिया गया। सैनिक शासकों को डर था कि यदि वह अपने पति से मिलने इंग्लैंड गई, तो उसे वापिस म्यांमार लाना संभव नहीं होगा। आँग सान सू की अपनी आज़ादी को अपने देश के लोगों की आज़ादी से जोड़कर देखती थी। उनकी पुस्तक का शीर्षक 'फ्रीडम फ्रॉम फीयर' (भय से मुक्ति) है। वह कहती हैं, "मेरे लिए वास्तविक मुक्ति भय से मुक्ति है। भय से मुक्त हुए बिना आप गरिमापूर्ण मानवीय जीवन नहीं जी सकते।'' ये गहरे विचार हैं, जो हमसे एक क्षण रुकने और अपने निहितार्थ समझने की माँग करते हैं। सू की का कहना है कि हमें न तो बाकी लोगों के विचारों से और न ही सत्ता के व्यवहार से डरना चाहिए। हम जो करना चाहते हैं, उसके बारे में समाज के लोगों की प्रतिक्रियाओं, साथ के लोगों के मजाक उड़ाने से ही अपने अथवा मन के भय से नहीं डरना चाहिए। इसके बाद भी हम अकसर भय का प्रदर्शन करते हैं। आँग सान सू की के अनुसार गरिमापूर्ण मानवीय जीवन जीने के लिए ज़रूरी है कि हम भय पर विजय पाएँ।

आँग सान सू की और नेल्सन मंडेला की इन दो पुस्तकों में हम स्वतंत्रता के आदर्श की शक्ति देख सकते हैं। यही आदर्श हमारे राष्ट्रीय संघर्ष और ब्रिटिश, फ्रांसीसी तथा पुर्तगाली उपनिवेशवाद के खिलाफ एशिया-अफ्रीका के लोगों के संघर्ष के केंद्र में था।

2.2 स्वतंत्रता क्या है?

"स्वतंत्रता क्या है?" इस प्रश्न का एक सीधा-सपाट उत्तर यह है कि व्यक्ति पर बाहरी प्रतिबंधों का अभाव ही स्वतंत्रता है। इस परिभाषा के हिसाब से यदि किसी व्यक्ति पर बाहरी नियंत्रण या दबाव न हो और वह बिना किसी पर निर्भर हुए निर्णय ले सके तथा स्वायत्त तरीके से व्यवहार कर सके, तो वह व्यक्ति स्वतंत्र माना जा सकता है। हालाँकि प्रतिबंधों का न होना स्वतंत्रता का केवल एक पहलू है। स्वतंत्रता का अर्थ व्यक्ति की आत्म-अभिव्यक्ति की योग्यता का विस्तार करना और उसके अंदर की संभावनाओं को विकसित करना भी है। इस अर्थ में स्वतंत्रता वह स्थिति है, जिसमें लोग अपनी रचनात्मकता और क्षमताओं का विकास कर सकें।

बाहरी प्रतिबंधों का अभाव और ऐसी स्थितियों का होना जिनमें लोग अपनी प्रतिभा का विकास कर सकें, स्वतंत्रता के ये दोनों ही पहलू महत्त्वपूर्ण हैं। एक स्वतंत्र समाज वह होगा, जो अपने सदस्यों को न्यूनतम सामाजिक अवरोधों के साथ अपनी संभावनाओं के विकास में समर्थ बनाएगा।

आओ कुछ करके सीखें

क्या आप अपने गाँव, शहर या जनपद में ऐसे किसी व्यक्ति के बारे में याद कर सकते हैं, जिसने अपनी या औरों की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया हो? उस व्यक्ति के बारे में एक छोटा-सा लेख लिखिए। इस लेख में यह भी लिखिए कि उस व्यक्ति ने स्वतंत्रता के किस खास पहलू की रक्षा के लिए संघर्ष किया।

© NCERT not to be republished

स्वतंत्रता

स्वराज

भारतीय राजनीतिक विचारों में स्वतंत्रता की समानार्थी अवधारणा 'स्वराज' है। स्वराज का अर्थ 'स्व' का शासन भी हो सकता है और 'स्व' के ऊपर शासन भी हो सकता है। भारत के स्वतंत्रता संघर्ष के संदर्भ में स्वराज राजनीतिक और संवैधानिक स्तर पर स्वतंत्रता की माँग है और सामाजिक और सामूहिक स्तर पर यह एक मूल्य है। इसीलिए स्वराज स्वतंत्रता आंदोलन में एक महत्त्वपूर्ण नारा बन गया जिसने तिलक के प्रसिद्ध कथन 'स्वराज मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूँगा' को प्रेरित किया।

स्वराज का आशय अपने ऊपर अपना राज भी है। स्वराज की यही समझ गांधी के 'हिंद स्वराज' में प्रकट हुई है। हिंद स्वराज के शब्दों में, "जब हम स्वयं पर शासन करना सीखते हैं तभी स्वराज है"। स्वराज केवल स्वतंत्रता नहीं ऐसी संस्थाओं से मुक्ति भी है, जो मनुष्य को उसी मनुष्यता से वंचित करती है।

स्वराज में मानव को यंत्रवत बनाने वाली संस्थाओं से मुक्ति पाना निहित है। साथ ही स्वराज में आत्मसम्मान, दायित्वबोध और आत्म साक्षात्कार को पाना भी शामिल है। स्वराज पाने की परियोजना में सच्चे 'स्व' और उसके समाज-समुदाय से रिश्तों को समझना महत्त्वपूर्ण है।'

गांधी जी का मानना था कि 'स्वराज' के फलस्वरूप होने वाले बदलाव न्याय के सिद्धांत से निर्देशित होकर व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों तरह की संभावनाओं को अवमुक्त करेंगे। कहना न होगा कि स्वराज की ऐसी समझ 21वीं सदी में भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी 1909 में गांधी के हिंद स्वराज लिखते समय थी।

समाज में रहने वाला कोई भी व्यक्ति हर किस्म की सीमा और प्रतिबंधों की पूर्ण अनुपस्थिति की उम्मीद नहीं कर सकता। ऐसे में यह तय करना ज़रूरी हो जाता है कि कौन-से सामाजिक प्रतिबंध न्यायोचित हैं और कौन-से नहीं, किस को स्वीकार किया जा सकता है और किस को हटाया जाना चाहिए। व्यक्ति और समाज के बीच बने केंद्रीय संबंधों को समझकर ही यह जाना जा सकता है कि कौन-से सामाजिक प्रतिबंध जरूरी हैं। यहाँ समाज का अर्थ समूह, समुदाय अथवा राज्य भी हो सकता है जिसके भीरत व्यक्ति मौजूद होता है। मतलब यह है कि हमें व्यक्ति और समाज के बीच के रिश्तों की पड़ताल करने की ज़रूरत है। यह देखना भी ज़रूरी होगा कि समाज का कौन-सा लक्षण व्यक्ति को चयन, निर्णय या काम करने की स्वतंत्रता देता है और कौन-सा नहीं। हमें यह तय करने की ज़रूरत है कि कौन-सा लक्षण वांछित है और कौन-सा नहीं, किस लक्षण को दूर किया जाना चाहिए और किसको नहीं। हमें यह भी देखने की आवश्यकता होगी कि जो सिद्धांत हमने यह तय करने में इस्तेमाल किया कि कौन-सा प्रतिबंध ज़रूरी है क्या उस सिद्धांत को व्यक्तिगत और समूह तथा राष्ट्र के बीच के संबंधों पर भी लागू कर सकते हैं?

अभी तक हमने स्वतंत्रता को प्रतिबंधों के अभाव के रूप में परिभाषित किया है। स्वतंत्र होने का अर्थ उन सामाजिक प्रतिबंधों को कम से कमतर करना है जो हमारी स्वतंत्रता पूर्वक चयन करने की क्षमता पर रोकटोक लगाए। हालाँकि यह स्वतंत्रता का केवल एक पहलू है। दूसरे शब्दों में स्वतंत्रता का एक सकारात्मक पहलू भी है। स्वतंत्र

© NCERT not to be republished

होने के लिए समाज को उन बातों को विस्तार देना चाहिए जिससे व्यक्ति, समूह, समुदाय या राष्ट्र अपने भाग्य दिशा और स्वरूप का निर्धारण करने में समर्थ हो सकें। इस अर्थ में स्वतंत्रता व्यक्ति की रचनाशीलता, संवेदनशीलता और क्षमताओं के भरपूर विकास को बढावा देती है। यह विकास खेल, विज्ञान, कला, संगीत या अन्वेषण जैसे किसी भी क्षेत्र में हो सकता है।

स्वतंत्र समाज वह होता है, जिसमें व्यक्ति अपने हित संवर्धन न्यूनतम प्रतिबंधों के बीच करने में समर्थ हो। स्वतंत्रता को इसलिए बहुमूल्य माना जाता है, क्योंकि इससे हम निर्णय और चयन कर पाते हैं। स्वतंत्रता के कारण ही व्यक्ति अपने विवेक और निर्णय की शक्ति का प्रयोग कर पाते हैं।

वाद-विवाद-संवाद

लड़के-लड़कियों को यह तय करने की आज़ादी होनी चाहिए कि वे किससे शादी करें। इस मामले में अभिभावकों को कुछ नहीं कहना चाहिए।

प्रतिबंधों के स्रोत

व्यक्ति की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध प्रभुत्व और बाहरी नियंत्रण से लग सकते हैं। ये प्रतिबंध बलपूर्वक या सरकार द्वारा ऐसे कानून कि मदद से लगाए जा सकते हैं, जो शासकों की ताकत का प्रतिनिधित्व करे। ऐसे प्रतिबंध उपनिवेशवादी शासकों ने या दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद की व्यवस्था ने लगाए। सरकार की कोई न कोई ज़रूरत हो सकती है, लेकिन सरकार लोकतांत्रिक हो तो राज्य के नागरिकों का अपने शासकों पर कुछ नियंत्रण हो सकता है। इसलिए लोकतांत्रिक सरकार लोगों की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए एक ज़रूरी माध्यम मानी गई है।

लेकिन स्वतंत्रता पर प्रतिबंध सामाजिक असमानता के कारण भी हो सकते हैं जैसा कि जाति व्यवस्था में होता है और समाज में अत्यधिक आर्थिक असमानता के कारण भी हो स्वतंत्रता पर अंकुश लग सकते हैं। सुभाष चन्द्र बोस का कथन ऐसे ही प्रतिबंधों को दूर करने की ज़रूरत की ओर ध्यान दिलाता है।

2.3 हमें प्रतिबंधों की आवश्यकता क्यों है?

हम ऐसी दुनिया में नहीं रह सकते जिसमें कोई प्रतिबंध ही न हो। हमें कुछ प्रतिबंधों की तो ज़रूरत है, अन्यथा समाज अव्यवस्था की गर्त में पहुँच जाएगा। लोगों के बीच मत-मतांतर हो सकते हैं, उनकी महत्त्वाकांक्षाओं में टकराव हो सकता है, वे सीमित साधनों के लिए प्रतिस्पर्धी हो सकते हैं। समाज में असहमति उभरने के अनेक कारण हो सकते हैं और कुछ तो खुले संघर्ष के रूप में भी व्यक्त हो सकते हैं। हम चारों ओर छोटे-बड़े कारणों पर लड़ने के लिए तैयार लोगों को देखते हैं। सड़क पर गाड़ी चलाते समय क्रोध, पार्किंग में जगह के लिए झगड़ा, जमीन या मकान के लिए लड़ाई, किसी खास फिल्म

© NCERT not to be republished

स्वतंत्रता

स्वतंत्रता के बारे में नेताजी सुभाष चन्द्र के विचार

यदि हम विचारों में क्रांति लाना चाहते हैं तो सबसे पहले हमारे सामने एक ऐसा आदर्श होना चाहिए जो हमारे पूरे जीवन को एक उमंग से भर दे। यह आदर्श स्वतंत्रता का है। लेकिन स्वतंत्रता एक ऐसा शब्द है, जिसके बहुत सारे अर्थ हैं। हमारे देश में भी स्वतंत्रता की अवधारणा विकास की एक प्रक्रिया से गुजरी है। स्वतंत्रता से मेरा आशय ऐसी सर्वांगीण स्वतंत्रता है- जो व्यक्ति और समाज की हो, अमीर और गरीब की हो, स्त्रियों और पुरुषों की हो तथा सभी लोगों और सभी वर्गों की हो। इस स्वतंत्रता का मतलब न केवल राजनीतिक गुलामी से मुक्ति होगा बल्कि संपत्ति का समान बंटवारा, जातिगत अवरोधों और सामाजिक असमानताओं का अंत तथा सांप्रदायिकता और धार्मिक असहिष्णुता का सर्वनाश भी होगा। यह आदर्श व्यवहार कुशल स्त्री-पुरुषों को स्वप्न-सरीखा लग सकता है, लेकिन केवल यही आदर्श आत्मा की भूख मिटा सकता है।

(19 अक्टूबर 1929 को लाहौर में छात्र सम्मेलन में दिया गया अध्यक्षीय भाषण)

को दिखाए जाने पर असहमति जैसे अनेक मुद्दे संघर्ष, हिंसा और कई बार जन हानि तक ले जाते हैं। इसलिए हर समाज को हिंसा पर नियंत्रण और विवाद के निबटारे के लिए कोई न कोई तरीका अपनाना ज़रूरी होता है। जब तक हम एक-दूसरे के विचारों का सम्मान करें और दूसरे पर अपने विचार थोपने का प्रयास न करें तब तक हम आज़ादी के साथ और न्यूनतम प्रतिबंधों के साथ रहने में सक्षम रहेंगे। आदर्श रूप में एक मुक्त समाज में हमें अपने विचारों को बनाए रखने, जीने के अपने तरीके विकसित करने और अपनी इच्छाओं का पालन करने में समर्थ होना चाहिए।

लेकिन ऐसे समाज के निर्माण के लिए भी कुछ प्रतिबंधों की आवश्यकता होती है। कम से कम यह ज़रूरी होती है कि हम विचार, विश्वास और मत के अंतरों को स्वीकार करने के लिए तैयार रहें। कभी-कभी हमें लग सकता है कि हमारी प्रबल आस्थाओं के लिए ज़रूरी है कि हम उन सबका विरोध करें, जो हमारे विचारों को खारिज करते हैं या उनसे अलग राय रखते हैं। हमें कुछ विचार या जीवन शैली अस्वीकार्य या अवांछित लग सकते हैं। ऐसी स्थिति में कुछ ऐसे कानूनी और राजनीतिक प्रतिबंध होने चाहिए, जिनसे यह सुनिश्चित हो सके कि एक समूह के विचारों को दूसरे पर आरोपित किए बिना आपसी अंतरों पर चर्चा और वाद-विवाद हो सके। बदतर स्थिति में हमें किसी के विचारों से एकरूप हो जाने के लिए बाध्य किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में हमें अपनी स्वतंत्रता को बचाने के लिए कानून के संरक्षण की और भी ज़्यादा ज़रूरत होती है।

हालाँकि महत्त्वपूर्ण सवाल यह पहचानना है कि स्वतंत्रता पर कौन-सा प्रतिबंध आवश्यक और औचित्यपूर्ण है और कौन-सा नहीं? कौन-सी सत्ता औचित्यपूर्वक यह कह सकती है कि क्या किया जा सकता है और क्या नहीं? और, क्या हमारे जीवन के कुछ क्षेत्र और कार्य ऐसे हैं, जिन्हें सभी बाहरी प्रतिबंधों से मुक्त छोड़ दिया जाना चाहिए?

© NCERT not to be republished

स्वतंत्रता

2.4 'हानि सिद्धांत'

इस सवाल का संतोषजनक जवाब देने के लिए हमें प्रतिबंध, सीमा आरोपित करने की सक्षमता और उनके परिणामों से जुड़े मुद्दों को देखना होगा। हमें एक और मुद्दे पर ध्यान देना होगा जिसे जॉन स्टुअर्ट मिल ने अपने निबंध 'ऑन लिबर्टी' में बहुत प्रभावपूर्ण तरीके से उठाया है। राजनीतिक सिद्धांत के विमर्श में इसे 'हानि सिद्धांत' कहा जाता है। आइए मिल के कथन को उसी के शब्दों में पढ़ें और समझने का प्रयास करें।

"सिद्धांत यह है कि किसी के कार्य करने की स्वतंत्रता में व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से हस्तक्षेप करने का इकलौता लक्ष्य आत्म-रक्षा है। सभ्य समाज के किसी सदस्य की इच्छा के खिलाफ शक्ति के औचित्यपूर्ण प्रयोग का एकमात्र उद्देश्य किसी अन्य को हानि से बचाना हो सकता है।"

मिल ने यहाँ एक महत्त्वपूर्ण विभेद को सामने रखा। मिल ने 'स्वसंबद्ध' और 'परसंबद्ध' कार्यों में अंतर बताया। स्वसंबद्ध वे कार्य हैं, जिनके प्रभाव केवल इन कार्यों को करने वाले व्यक्ति पर पड़ते हैं जबकि परसंबद्ध कार्य वे हैं जो कर्ता के अलावा बाकी लोगों पर भी प्रभाव डालते हैं। मिल का तर्क है कि स्वसंबद्ध कार्य और निर्णयों के

उदारवाद

जब हम कहते हैं कि उसके माता-पिता बड़े उदार हैं, तब हम अक्सर यह कहना चाहते हैं कि वे बड़े सहनशील हैं। एक राजनीतिक विचारधारा के रूप में उदारवाद को सहनशीलता के मूल्य के साथ जोड़ कर देखा जाता है। उदारवादी चाहे किसी व्यक्ति से असहमत हों, तब भी वे उसके विचार और विश्वास रखने और व्यक्त करने के अधिकार का पक्ष लेते हैं। लेकिन उदारवाद इतना भर नहीं है और न ही उदारवाद एकमात्र आधुनिक विचारधारा है, जो सहिष्णुता का समर्थन करती है। आधुनिक उदारवाद की विशेषता यह है कि इसमें केंद्र बिंदु व्यक्ति है। उदारवाद के लिए परिवार, समाज या समुदाय जैसी ईकाइयों का अपने आप में कोई महत्त्व नहीं है। उनके लिए इन ईकाइयों का महत्त्व तभी है, जब व्यक्ति इन्हें महत्त्व दे। उदाहरण के लिए उदारवादी कहेंगे कि किसी से विवाह करने का निर्णय व्यक्ति को लेना चाहिए, परिवार, जाति या समुदाय को नहीं। उदारवादी व्यक्तिगत स्वतंत्रता को समानता जैसे अन्य मूल्यों से अधिक वरीयता देते हैं। वे आमतौर पर राजनीतिक सत्ता को भी संदेह की नज़र से देखते हैं।

ऐतिहासिक रूप से उदारवाद ने मुक्त बाज़ार और राज्य की न्यूनतम भूमिका का पक्ष लिया है। हालाँकि अब वे कल्याणकारी राज्य की भूमिका को स्वीकार करते हैं और मानते हैं कि सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को कम करने वाले उपायों की जरूरत है।

सभ्य समाज से उनका क्या मतलब है? जिस समाज में कानून का राज नहीं होता वहाँ स्वतंत्रता में हस्तक्षेप किस प्रकार होता है।

© NCERT not to be republished

स्वतंत्रता

मामले में राज्य या किसी बाहरी सत्ता को कोई हस्तक्षेप करने की ज़रूरत नहीं है। आसान शब्दों में कहें तो, स्वसंबद्ध कार्य वे हैं जिनके बारे में कहा जा सके कि 'ये मेरा काम है, मैं इसे वैसे करूँगा, जैसा मेरा मन होगा।' या "अगर ये आपके ऊपर असर नहीं डालते तो इससे आपको क्या मतलब है?" इसके विपरीत ऐसे कार्यों में जो दूसरों पर असर डालते हैं या जिनसे बाकी लोगों को कुछ हानि हो सकती है, बाहरी प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं। दूसरे शब्दों में परसंबद्ध कार्य वे हैं जिनके बारे में कहा जा सके कि अगर तुम्हारी गतिविधियों से मुझे कुछ नुकसान होता है, तो किसी न किसी बाहरी सत्ता को चाहिए कि मुझे इन नुकसानों से बचाए।" स्वतंत्रता से जुड़े मामलों में राज्य किसी व्यक्ति को ऐसे कार्य करने से रोक सकता है जो किसी अन्य को नुकसान पहुँचाता हो।

चूँकि स्वतंत्रता मानव समाज के केंद्र में है और गरिमापूर्ण मानव जीवन के लिए बेहद महत्त्वपूर्ण है, इसलिए इसपर प्रतिबंध बहुत ही खास स्थिति में लगाए जा सकते हैं। प्रतिबंध लगाने के लिए ज़रूरी है कि किसी को होने वाली 'हानि' गंभीर हो। छोटी-मोटी 'हानि' के लिए मिल कानून की ताकत की जगह केवल सामाजिक रूप से अमान्य करने के सुझाव देता है। उदाहरण के लिए किसी बहुमंजिले भवन में ऊँची आवाज़ में संगीत बजाने पर इमारत के अन्य रहवासियों द्वारा सामाजिक असहमति जताना काफी होना चाहिए। इसमें पुलिस को शामिल नहीं किया जाना चाहिए। जो व्यक्ति औरों को होने वाले नुकसान की परवाह न करते हुए ऊँची आवाज़ में संगीत सुनता है, चाहें तो बाकी लोग उसका अभिवादन करना बंद कर सकते हैं। ऊँची आवाज़ में संगीत सुनना बाकी लोगों को बातचीत करने, सोने और अपना संगीत सुनने से रोकता है। ये छोटे-छोटे नुकसान हैं और इनके लिए केवल सामाजिक असहमति दर्शाना काफी होगा। यह कानूनी दंड के लिए उपयुक्त मामला नहीं है। किन्हीं कार्यों (परसंबद्ध) पर कानूनी शक्ति से प्रतिबंध केवल तभी लगाना चाहिए जब वे निश्चित व्यक्तियों को गंभीर नुकसान पहुँचाए अन्यथा समाज को स्वतंत्रता की रक्षा के लिए थोड़ी असुविधा सहनी चाहिए।

लोगों को विविध जीवन शैलियों, विभिन्न दृष्टिकोण और अलग-अलग हितों को सहन करने के लिए तब तक तैयार रहना चाहिए, जब तक कि वे दूसरों को नुकसान न पहुँचाने लगें। लेकिन ऐसी सहनशीलता का विस्तार उन विचारों या कार्यों तक करने की ज़रूरत नहीं है, जो लोगों को खतरे में डाले या उनके प्रति नफरत का जहर फैलाए। घृणा का प्रचार और गंभीर क्षति पहुँचाने वाले कार्यों पर प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं। लेकिन हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रतिबंध इतने कड़े न हों कि स्वतंत्रता ही नष्ट हो जाए। उदाहरण के लिए जिसने किसी के प्रति नफरत फैलाई है, हम उसके लिए आजीवन कैद की माँग नहीं कर सकते। अगर वह राज्य द्वारा मिथ्या प्रचार से दूर रहने की चेतावनी के बाद भी न माने तो उसके आवागमन पर कुछ रोक लगाई जा सकती है या कोई सभा आयोजित करने के उसके अधिकार की कटौती की जा सकती है।

© NCERT not to be republished

स्वतंत्रता

भारत में संवैधानिक चर्चाओं में ऐसी न्यायोचित सीमाओं के लिए औचित्यपूर्ण प्रतिबंध पद का इस्तेमाल किया गया है। कुछ प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं लेकिन ज़रूरी है कि वे समुचित हों और उन्हें तर्क की कसौटी पर कसा जा सके। ऐसे प्रतिबंधों में न तो

चिंतन-मंथन

परिधानों पर प्रतिबंध का मुद्दा

यदि अपने परिधान का चयन अपनी स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति है तो नीचे दी गई उन स्थितियों को किस तरह देखेंगे जिनमें खास तरह के परिधान पर प्रतिबंध लगाया गया है?

- ☐ माओ के शासनकाल में चीन में सभी लोगों को 'माओ सूट' पहनना पड़ता था। तर्क यह था कि यह समानता की अभिव्यक्ति है।
- ☐ एक मौलवी द्वारा सानिया मिर्जा के खिलाफ फतवा जारी किया गया क्योंकि उसका पहनावा उस पहनावे के खिलाफ माना गया जो महिलाओं के लिए तय किया गया है।
- ☐ क्रिकेट के टेस्ट मैचों में यह ज़रूरी है कि हर खिलाड़ी सफेद कपड़े पहने।
- ☐ छात्र-छात्राओं को विद्यालय में एक निर्धारित वेशभूषा में रहना पड़ता है।

वाद-विवाद

- ☐ मनचाहे परिधान पर प्रतिबंध सभी मामलों में न्यायोचित है या केवल कुछ में? यह स्वतंत्रता पर प्रतिबंध का मामला कब बन जाता है?
- ☐ इन प्रतिबंधों को लगाने का अधिकार किसको है? क्या धार्मिक नेताओं को परिधान के मामले में निर्णय देने का अधिकार होना चाहिए? क्या यह राज्य को तय करना चाहिए कि कोई क्या पहने? क्या क्रिकेट खेलते समय खिलाड़ियों के पहनावे के नियम तय करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड (ICC) उपयुक्त संस्था है?
- ☐ क्या प्रतिबंध आरोपित करना अन्यायपूर्ण होता है? क्या यह कई तरीके से व्यक्तियों की अभिव्यक्ति को कम करते हैं?
- ☐ आरोप को स्वीकार करने के परिणाम क्या होते हैं? क्या माओकालीन चीन में सभी लोगों के एक जैसे कपड़े पहनने से समाज में गरीबी कम हो गई?
- ☐ अगर महिलाएँ ऐसे कपड़े न पहन सकें जिनमें वे पुरजोर तरीके से संघर्ष कर पाएं तो, क्या यह माना जाए कि वे खेल में सहभागिता से वंचित की जा रही हैं? अगर क्रिकेट खिलाड़ी रंगीन कपड़े पहने तो क्या इससे खेल प्रभावित होगा?

अतिरेक हो और न ही असंतुलन क्योंकि तब यह समाज में स्वतंत्रता की सामान्य दशा पर असर डालेगा। हमें प्रतिबंध लगाने की आदत को विकसित नहीं होने देना चाहिए क्योंकि ऐसी आदत तो स्वतंत्रता को खतरे में डाल देगी।

© NCERT not to be republished

स्वतंत्रता

2.5 सकारात्मक एवं नकारात्मक स्वतंत्रता

इस अध्याय में पहले हमने स्वतंत्रता के दो आयामों की चर्चा की थी। बाहरी प्रतिबंधों के अभाव के रूप में स्वतंत्रता और स्वयं को अभिव्यक्त करने के अवसरों के विस्तार के रूप में स्वतंत्रता। राजनीतिक सिद्धांत में इन्हें नकारात्मक और सकारात्मक स्वतंत्रता कहते हैं। नकारात्मक स्वतंत्रता उस क्षेत्र को पहचानने और बचाने का प्रयास करती है, जिसमें व्यक्ति अनुलंघनीय हो। जिसमें वह जो होना, बनना या करना चाहे हो सके, बन सके और कर सके। यह ऐसा क्षेत्र होगा जिसमें किसी बाहरी सत्ता का हस्तक्षेप नहीं होगा। यह छोटा-सा पवित्र क्षेत्र है, जिसमें व्यक्ति कुछ भी करे, लेकिन उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जाता। अहस्तक्षेप के इस छोटे से क्षेत्र का होना इस बात की स्वीकृति है कि मानव प्रकृति और मानव गरिमा को एक ऐसे क्षेत्र की आवश्यकता है, जिसमें व्यक्ति दूसरों से अबाधित रूप में व्यवहार कर सके। यह क्षेत्र कितना बड़ा होना चाहिए और इसमें क्या-क्या शामिल होना चाहिए? ये वाद-विवाद के विषय हैं और बने रहेंगे क्योंकि अहस्तक्षेप का क्षेत्र जितना बड़ा होगा, स्वतंत्रता उतनी ही अधिक होगी।

हमें जो मानने की ज़रूरत है, वह यह है कि नकारात्मक स्वतंत्रता की परंपरा व्यक्ति के लिए एक ऐसे दायरे की बात कहती है जो अनुल्लंघनीय हो, जिसमें व्यक्ति स्वयं को व्यक्त कर सके। अगर यह क्षेत्र बहुत छोटा है, तो मानव गरिमा में कटौती होती है। मिसाल के तौर पर ऐसे दायरे को चिन्हित करने के लिए यह सवाल पूछा जा सकता है। विद्यालय, खेल का मैदान और कार्यालय जैसी विभिन्न स्थितियों में पहनावे का चयन क्या ऐसा मामला है, जो अहस्तक्षेप के लघुत्तम क्षेत्र में आता है और क्या इसलिए यह ऐसा चयन है जिसमें कोई बाहरी सत्ता दखल नहीं दे सकती या यह ऐसा मामला है, जिसमें राज्य, धार्मिक सत्ता, आईसीसी या सीबीएसई जैसी कोई भी संस्था हस्तक्षेप कर सकती है। नकारात्मक स्वतंत्रता का तर्क होता है कि वह कौन-सा क्षेत्र है, जिसका स्वामी मैं हूँ? 'नकारात्मक स्वतंत्रता का तर्क यह स्पष्ट करता है कि व्यक्ति क्या करने से मुक्त है। इससे उलट सकारात्मक स्वतंत्रता के तर्क 'कुछ करने की स्वंतत्रता' के विचार की व्याख्या से जुड़े हैं। ये तर्क इस सवाल के जवाब में आते हैं कि 'मुझ पर शासन कौन करता है?' इस प्रश्न का आदर्श उत्तर होगा 'मैं स्वयं पर शासन करता हूँ।' सकारात्मक स्वतंत्रता के विमर्श की एक लंबी परंपरा है। जिससे रूसो, हेगेल, मार्क्स, गांधी, अरविंद और इन विचारकों से प्रेरणा लेने वालों में देखा जा सकता है। इस परंपरा का सरोकार व्यक्ति और समाज के संबधों की प्रकृति और स्थिति से है। यह परंपरा इन संबंधों को इस तरह सुधारना चाहती है कि किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में कम से कम अवरोध रहे। व्यक्ति एक पुष्प की तरह है। जब मिट्टी उपजाऊ हो, सूरज की रोशनी हो, पर्याप्त पानी हो और नियमित देखभाल हो तभी वह खिल पाता है।

© NCERT not to be republished

स्वतंत्रता

व्यक्ति को अपनी क्षमताओं का विकास करने के लिए भौतिक, राजनीतिक एवं सामाजिक जगत में समर्थकारी सकारात्मक स्थितियों का लाभ मिलना ही चाहिए। इसका अर्थ यह है कि व्यक्ति ग़रीबी अथवा बेरोजगारी के कारण अवरूद्ध न हो और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उसके पास पर्याप्त भौतिक साधन होने चाहिए। उसके पास निर्णय निर्माण की प्रक्रिया में भाग लेने का अवसर भी होना चाहिए जिससे कि बनने वाले कानूनों में उसकी इच्छा की झलक हो या कम से कम उसकी प्राथमिकताओं को ध्यान में लिया जाए। सबसे पहले तो अपने बुद्धि-विवेक के विकास के लिए शिक्षा और अच्छा जीवन जीने के लिए ज़रूरी अन्य अवसरों तक व्यक्ति की पहुँच होनी चाहिए।

सकारात्मक स्वतंत्रता के पक्षधरों का मानना है कि व्यक्ति केवल समाज में ही स्वतंत्र हो सकता है, समाज से बाहर नहीं और इसीलिए वह इस समाज को ऐसा बनाने का प्रयास करते हैं, जो व्यक्ति के विकास का रास्ता साफ करे। दूसरी ओर नकारात्मक स्वतंत्रता का सरोकार अहस्तक्षेप के अनुलंघनीय क्षेत्र से है, इस क्षेत्र से बाहर समाज की स्थितियों से नहीं। नकारात्मक स्वतंत्रता अहस्तक्षेप के इस छोटे क्षेत्र का अधिक से अधिक विस्तार करना चाहेगी। हालाँकि ऐसा करने में वह समाज के स्थायित्व को ध्यान में रखेगी। आमतौर पर दोनों तरह की स्वतंत्रताएँ साथ-साथ चलती हैं और एक दूसरे का समर्थन करती हैं लेकिन ऐसा भी हो सकता है कि निरकुंश शासक सकारात्मक स्वतंत्रता के तर्कों का सहारा लेकर अपने शासन को न्यायोचित सिद्ध करने की कोशिश करे।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' का मुद्दा 'अहस्तक्षेप के लघुत्तम क्षेत्र' से जुड़ा हुआ माना जाता है। जे.एस. मिल ने सबल तर्क रखे हैं कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रतिबंधित नहीं होनी चाहिए। यह चर्चा के लिए एक अच्छा प्रसंग है।

क्या हमें अपने पर्यावरण को नष्ट करने की आज़ादी है?

बहुत बार किसी पुस्तक, नाटक, फिल्म या किसी शोध पत्रिका के लेख पर प्रतिबंध लगाने की माँग उठती है। किसी पुस्तक पर प्रतिबंध लगाने की माँग को इस चर्चा के आलोक में देखा जाए। अभी तक हमने स्वतंत्रता को विकल्प निर्धारण के रूप में देखा जहाँ, सकारात्मक और नकारात्मक स्वतंत्रता के बीच फ़र्क किया गया। जहाँ हमने स्वतंत्रता पर न्यायोचित सीमाएँ लगाने की ज़रूरत को स्वीकार किया, लेकिन साथ ही यह भी माना कि इन सीमाओं को उचित प्रक्रिया और महत्त्वपूर्ण नैतिक तर्कों के समर्थन की ज़रूरत है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक बुनियादी मूल्य है और जो लोग इसको सीमित करना चाहते हैं, उनसे बचने के लिए समाज को कुछ असुविधाओं को सहन करने के लिए तैयार रहना चाहिए। वाल्तेयर का कथन याद करें, ''तुम जो कहते हो मैं उसका समर्थन नहीं करता। लेकिन मैं मरते दम तक तुम्हारे कहने के अधिकार का बचाव करूँगा।'' हम इस अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से कितनी गहराई से प्रतिबद्ध हैं।

© NCERT not to be republished

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

19वीं शताब्दी के ब्रिटेन के एक राजनीतिक विचारक जॉन स्टुअर्ट मिल ने अभिव्यक्ति तथा विचार और वाद-विवाद की स्वतंत्रता का बहुत ही भावपूर्ण पक्ष प्रस्तुत किया है। अपनी पुस्तक 'ऑन लिबर्टी' में उसने चार कारण पेश किए हैं कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता उन्हें भी होनी चाहिए जिनके विचार आज की स्थितियों में ग़लत या भ्रामक लग रहे हों।

पहला कारण तो यह कि कोई भी विचार पूरी तरह से गलत नहीं होता। जो हमें गलत लगता है उसमें सच्चाई का तत्त्व होता है। अगर हम गलत विचार को प्रतिबंधित कर देंगे तो इसमें छुपे सच्चाई के अंश को भी खो देंगे।

दूसरा कारण पहले कारण से जुड़ा है। सत्य स्वयं में उत्पन्न नहीं होता। सत्य विरोधी विचारों के टकराव से पैदा होता है। जो विचार आज गलत प्रतीत होता है वह सही तरह के विचारों के उदय में बहुमूल्य हो सकता है।

तीसरा, विचारों का यह संघर्ष केवल अतीत में ही मूल्यवान नहीं था, बल्कि हर समय में इसका सतत महत्त्व है। सत्य के बारे यह खतरा हमेशा होता है कि वह एक विचारहीन और रूढ़ उक्ति में बदल जाए। जब हम इसे विरोधी विचार के सामने रखते हैं तभी इस विचार का विश्वसनीय होना सिद्ध होता है।

अंतिम बात यह कि हम इस बात को लेकर भी निश्चित नहीं हो सकते कि जिसे हम सत्य समझते हैं वही सत्य है। कई बार जिन विचारों को किसी समय पूरे समाज ने गलत समझा और दबाया था, बाद में सत्य पाए गए। कुछ समाज ऐसे विचारों का दमन करते हैं 'जो आज उनके लिए स्वीकार्य नहीं हैं' लेकिन ये विचार आने वाले समय में बहुत मूल्यवान ज्ञान में बदल सकते हैं। दमनकारी समाज ऐसे संभावनाशील ज्ञान के लाभों से वंचित रह जाते हैं।

कुछ वर्ष पहले एक फिल्म निर्माता दीपा मेहता काशी में विधवाओं पर एक फिल्म बनाना चाहती थीं। यह फिल्म विधवाओं की व्यथा को खोजना चाहती थी। लेकिन राजनीति के एक हिस्से द्वारा इसका जबरदस्त विरोध हुआ। विरोधियों को लगता था कि इसमें भारत को बहुत बुरे तरीके से प्रस्तुत किया जाएगा। उन्हें यह भी लगता था कि यह फिल्म विदेशी दर्शकों की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए बनाई जा रही है और इससे प्राचीन नगर की बदनामी होगी। उन्होंने इस फिल्म को नहीं बनने दिया और परिणामस्वरूप फिल्म काशी में नहीं बनाई जा सकी। बाद में यह फिल्म कहीं और बनाई गई। इसी तरह से ओब्रे मेनन की 'रामायण रिटोल्ड' और सलमान रुश्दी की 'द सेटानिक वर्सेस' समाज के कुछ हिस्सों में विरोध के बाद प्रतिबंधित कर दी गई। 'द लास्ट टेम्पटेशन ऑफ क्राइस्ट' नामक फिल्म और 'मी नाथूराम बोलते' नाम का नाटक भी अन्य समूहों द्वारा विरोध के बाद प्रतिबंधित कर दिए गए। इस तरह के प्रतिबंध आसान लेकिन अल्पकालीन समाधान हैं क्योंकि यह तात्कालिक माँग को पूरा कर देते हैं, लेकिन समाज में स्वतंत्रता की दूरगामी संभावनाओं की दृष्टि से यह बहुत खतरनाक है, क्योंकि जब हम एक बार प्रतिबंध लगाने लगते हैं, तब प्रतिबंध लगाने की आदत विकसित हो जाती है। लेकिन क्या इसका मतलब यह है कि प्रतिबंध कभी लगाया ही नहीं जाना चाहिए। आखिरकार हम

© NCERT not to be republished

फिल्मों की सेंसरशिप भी तो करते हैं। सेंसरशिप प्रतिबंध से अलग है। जिन सवालों पर अक्सर वाद-विवाद होता है, वे ये हैं कि किस स्थिति में प्रतिबंध लगाना चाहिए और किसमें नहीं? क्या प्रतिबंध कभी नहीं लगाए जाने चाहिए? इसी से जुड़ी दिलचस्प बात है कि इंग्लैंड में जो भी राजपरिवार के लिए काम करता है वह राजमहल की आंतरिक बातों के बारे में न लिखने के लिए एक समझौते से बंधा होता है।

अगर ऐसा कोई व्यक्ति राजमहल की नौकरी छोड़ने के बाद महल की राजनीति के बारे में कोई साक्षात्कार देना चाहे, लेख या पुस्तक लिखना चाहे तो वह ऐसा नहीं कर सकता। क्या यह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर अन्यायपूर्ण प्रतिबंध है?

अलग-अलग तरह की सीमाएँ वजूद में हैं और वे हम पर विभिन्न स्थितियों में लागू होती हैं। इन प्रतिबंधों के बारे में सोचते समय हमें यह महसूस करने की ज़रूरत है कि जब ये प्रतिबंध किसी संगठित सामाजिक, धार्मिक या सांस्कृतिक सत्ता या राज्य की शक्ति के बल पर लगाए जाते हैं। तब ये हमारी स्वतंत्रता की कटौती इस प्रकार करते हैं कि उनके खिलाफ लड़ना मुश्किल हो जाता है। हालाँकि यदि हम स्वेच्छापूर्वक या अपने लक्ष्यों और आकांक्षाओं को पाने के लिए कुछ प्रतिबंधों को स्वीकार करते हैं, तो हमारी स्वतंत्रता उस प्रकार से सीमित नहीं होती। अगर हमें किन्हीं स्थितियों को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं किया जा रहा तब हम नहीं कह सकते कि हमारी स्वतंत्रता की कटौती की जा रही है।

हमने यह कहते हुए शुरुआत की थी कि स्वतंत्रता बाहरी प्रतिबंधों का अभाव है। अब हम यह महसूस कर चुके हैं कि स्वतंत्रता हमारे विकल्प चुनने के सामर्थ्य और क्षमताओं में छुपी होती है और जब हम विकल्प चुनते हैं तो हमें अपने कार्यों और उसके परिणामों की जिम्मेदारी भी स्वीकार करनी होगी। इसीलिए स्वतंत्रता के अधिकतर पक्षधर लोग मानते हैं कि बच्चों को माता-पिता की देखभाल में रखा जाना चाहिए। सही निर्णय लेने, उपलब्ध विकल्पों को विवेकपूर्वक जाँचने और अपने कार्यों की जिम्मेदारी अपने कंधों पर लेने की हमारी क्षमता का जितना विकास शिक्षा और निर्णय निर्माण के परिष्कार से होता है उतनी ही ज़रूरत इसको राज्य और समाज की सत्ता को सीमित करके पालने-पोसने की है।

© NCERT not to be republished

स्वतंत्रता

प्रश्नावली

1. स्वतंत्रता से क्या आशय है? क्या व्यक्ति के लिए स्वतंत्रता और राष्ट्र के लिए स्वतंत्रता में कोई संबंध है।

2. स्वतंत्रता की नकारात्मक और सकारात्मक अवधारणा में क्या अंतर है?

3. सामाजिक प्रतिबंधों से क्या आशय है? क्या किसी भी प्रकार के प्रतिबंध स्वतंत्रता के लिए आवश्यक हैं?

4. नागरिकों की स्वतंत्रता को बनाए रखने में राज्य की क्या भूमिका है?

5. अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का क्या अर्थ है? आपकी राय में इस स्वतंत्रता पर समुचित प्रतिबंध क्या होंगे? उदाहरण सहित बताइये।

प्रश्नावली

© NCERT not to be republished